Shodhbodhalaya: An International Peer reviewed Multidisciplinary Journal

Volume 1 | Issue 1 | ISSN: 2584-1807 | (https://shodhbodh.com/)

मीराबाई के साहित्य में रहस्य भावना

डॉ. अनीता रानी

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग।

सनातन धर्म महिला महाविद्यालय नरवाना (जींद)

dr.anita.chhabra@gmail.com

शोध-सार

मध्यकालीन भारतीय भक्ति आंदोलन के अंतर्गत सगुण कृष्णभक्त कवयित्री मीराबाई का स्थान अद्वितीय है। मीराबाई का काव्य मूलतः माधुर्य भाव की प्रेमाभक्ति का प्रतिमान है, किंतु उनके साहित्य में अंतर्धारा के रूप में प्रवाहित 'रहस्यभावना' का स्वरूप अत्यंत विरल और गंभीर है। प्रस्तुत शोध-पत्र मीराबाई की पदावली में अभिव्यक्त रहस्यवादी चेतना का सूक्ष्म विवेचन करता है। सामान्यतः रहस्यवाद को निर्गुण संतों की थाती माना जाता रहा है, परंतु मीरा के काव्य में सगुण साकार 'गिरधर नागर' के प्रति जो अनन्य आत्मसमर्पण है, वह आगे चलकर आत्मा और परमात्मा के अद्वैत तादात्म्य में परिणत हो जाता है। इस शोध में मीरा की रहस्यभावना के विविध सोपानों—अलौकिक विरह की तीव्र अनुभूति, साधनात्मक एवं भावनात्मक प्रभाव, प्रियतम से मिलन का अतींद्रिय उल्लास तथा सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह—का समकालीन अकादमिक विमर्श के आलोक में मूल्यांकन किया गया है। अंततः यह सिद्ध किया गया है कि मीरा का रहस्यवाद शुष्क वेदांत या केवल हठयोग की जटिल प्रक्रिया नहीं है, बल्कि वह हृदय की सहज, रागात्मक और उत्कट अनुभूति का चरम उत्कर्ष है जो भक्त को पूर्ण मुक्ति का मार्ग दिखाता है।

मुख्य शब्द: मीराबाई, रहस्यभावना, माधुर्य भक्ति, अलौकिक विरह, अद्वैत तादात्म्य, मध्यकालीन काव्य, आत्मसमर्पण, स्त्री-विमर्श।

1. प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्ति काल (संवत 1375-1700) को 'स्वर्णयुग' के रूप में अभिहित किया जाता है।[15] इस कालखंड में जहाँ ज्ञानमार्गी और प्रेममार्गी धाराओं ने निर्गुण निराकार की उपासना की, वहीं रामभक्ति और कृष्णभक्ति धाराओं ने सगुण साकार को अपनी साधना का केंद्र बनाया। इन सगुण साकार के आराधकों में मीराबाई का व्यक्तित्व और कृतित्व अपनी विशिष्ट रागात्मकता के कारण सबसे अलग दीप्त होता है। संवत् 1561 (तदनुसार 1504 ईस्वी) के आसपास कुड़की (मेड़ता, राजस्थान) में जनमी इस कवयित्री ने सामंती बंधनों और राजप्रासादों के वैभव को ठुकराकर जिस भक्ति मार्ग का चयन किया, वह केवल धार्मिक कृत्य नहीं था, अपितु एक जीवात्मा का अपनी मूल चेतना (परमात्मा) की ओर महाप्रस्थान था।[16]

मीरा के काव्य का मूल उत्स 'प्रेम' है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार, "मीराबाई का प्रेम ही उनकी भक्ति का रूप है।"[17] किंतु जब प्रेम अपनी लौकिक सीमाओं को लांघकर अतींद्रिय और अलौकिक सत्ता के साथ एकाकार होने लगता है, तो वहीं से 'रहस्यवाद' का सूत्रपात होता है। साहित्यशास्त्र में रहस्यवाद को उस मानसिक स्थिति के रूप में परिभाषित किया जाता है, जहाँ साधक उस असीम, अज्ञात और परम सत्ता के साथ अपने व्यक्तिगत संबंधों की अभिव्यक्ति करता है। मीराबाई सगुण रूप में कृष्ण की आराधना करती हैं, किंतु उनके विरह और मिलन के पदों में जो अव्यक्त और असीम तन्मयता है, वह निर्गुण संतों की रहस्यभावना के अत्यंत निकट पहुँच जाती है। प्रस्तुत शोध पत्र इसी सूक्ष्म अंतर्संबंध को उद्घाटित करने का एक विस्तृत अकादमिक प्रयास है।

2. रहस्यवाद की दार्शनिक पृष्ठभूमि और परिभाषा

रहस्यवाद मूलतः अंतःकरण की वह अवस्था है जिसमें आत्मा बाह्य जगत के कोलाहल से मुक्त होकर अंतर्जगत में परम तत्व का साक्षात्कार करती है। भारतीय दर्शन में इसे 'अद्वैत अनुभूति' कहा गया है, जहाँ जीव और ब्रह्म का भेद

[15] शुक्ल, रामचंद्र. *हिन्दी साहित्य का इतिहास*. नागरी प्रचारिणी सभा, 1929, पृष्ठ संख्या 112-115

[16] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 45

[17] शुक्ल, रामचंद्र. *हिन्दी साहित्य का इतिहास*. नागरी प्रचारिणी सभा, 1929, पृष्ठ संख्या 134

समाप्त हो जाता है। पाश्चात्य विचारकों ने भी इसे आत्मा का परमात्मा के साथ सचेतन मिलन माना है।[18] मध्यकाल में यह भावना भारत की विभिन्न ज्ञान धाराओं से पोषित हो रही थी। उपनिषदों का 'अहं ब्रह्मास्मि' और 'तत्त्वमसि' का सिद्धांत जब कबीर और मीरा के युग तक पहुँचा, तो वह केवल बौद्धिक विमर्श नहीं रहा, बल्कि लोक-भाषा में हृदय की धड़कन बन गया।

भक्तिकाल में रहस्यवाद के दो प्रमुख रूप दिखाई देते हैं:

- **साधनात्मक रहस्यवाद:** जो नाथ पंथियों, हठयोगियों और कबीर आदि ज्ञानमार्गी संतों में मिलता है, जहाँ इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना और षट्चक्र भेदन जैसी कठिन यौगिक क्रियाओं पर बल दिया जाता है।
- **भावनात्मक रहस्यवाद:** जो सूफी संतों और वैष्णव भक्तों में पाया जाता है, जहाँ प्रेम को ही परमात्मा तक पहुँचने का एकमात्र और सर्वोपरि साधन माना गया है।

मीराबाई मूलतः भावनात्मक रहस्यवाद की साधिका हैं। यद्यपि उनके काव्य पर तत्कालीन संत संप्रदाय और विशेषकर उनके गुरु माने जाने वाले संत रैदास का गहरा प्रभाव था, जिसके कारण कतिपय पदों में साधनात्मक रहस्यवाद के पारिभाषिक शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं; किंतु उनका मूल प्रासाद हृदय की रागात्मक वृत्तियों पर ही टिका हुआ है।[19] मीरा का गिरधर नागर कोई अमूर्त शून्य नहीं है, वह एक जीवंत सत्ता है, जिसके प्रति मीरा का समर्पण पूर्णतः एकनिष्ठ और अटूट है।

3. मीरा के काव्य में रहस्यभावना के विविध आयाम

मीरा की रहस्यभावना को किसी एक संकीर्ण सांचे में नहीं ढाला जा सकता। उनके काव्य में रहस्यवाद के कई स्तर और रूप एक साथ क्रियाशील दिखाई देते हैं, जिन्हें निम्नलिखित विस्तृत उप-शीर्षकों के अंतर्गत समझा जा सकता है:

[18] अंडरहिल, एवलिन. *रहस्यवाद: मानव की आध्यात्मिक चेतना के स्वरूप और विकास का एक अध्ययन*. डोवर पब्लिकेशन्स, 1911, पृष्ठ संख्या 72

[19] सिंह, डॉ. नामवर. *दूसरी परंपरा की खोज*. राजकमल प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या 89

3.1. अलौकिक विरह और उत्कट विह्वलता

रहस्यवाद की पहली सीढ़ी विरह की वह आग है जो साधक के भीतर के समस्त सांसारिक विकारों और अहं को जलाकर भस्म कर देती है। मीरा का विरह सामान्य लौकिक विरह नहीं है; यह उस अनंत प्रियतम से बिछड़ने की टीस है जो आत्मा को प्रतिक्षन आंदोलित करती है। मीरा स्वयं कहती हैं:

"हेरी मैं तो दरद दिवाणी होय, दरद न जाण्यां म्हांरो कोय।

सूली ऊपर सेज हमारी, सोवण किस बिध होय॥

गगन मंडल पर सेज पिया की, किस बिध मिलना होय।"[20]

इस पद में प्रयुक्त "गगन मंडल पर सेज पिया की" शब्दावली सीधे तौर पर कबीर के रहस्यवाद और नाथों के 'शून्य शिखर' की याद दिलाती है। यहाँ गिरधर केवल द्वारका के राजा या ब्रज के ग्वाल बाल नहीं हैं, बल्कि वे ब्रह्मांड के सर्वोच्च शिखर (गगन मंडल) पर निवास करने वाले परम पुरुष हैं, जिनसे मिलने के लिए मीरा की आत्मा तड़प रही है। विरह की यह पराकाष्ठा ही रहस्यवाद का प्राण है, जहाँ भौतिक दूरी समाप्त हो जाती है और केवल आत्मिक पुकार शेष रह जाती है।

3.2. दांपत्य भाव और पति-रूप में ईश्वर की कल्पना

रहस्यवादी कवियों की यह अनुपम विशेषता रही है कि वे ईश्वर के साथ अत्यंत आत्मीय संबंध स्थापित करते हैं। सूफी संतों ने जहाँ ईश्वर को प्रियतमा और स्वयं को प्रेमी माना, वहीं भारतीय संत और वैष्णव परंपरा में आत्मा को पत्नी और परमात्मा को पति के रूप में स्वीकार किया गया है। मीराबाई इस विधा की शीर्षस्थ साधिका हैं जो लोक की समस्त मर्यादाओं को लांघकर कहती हैं:

"माई म्हणे सुपने में परण्या गोपाल।

[20] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 14

छप्पन करोड़ जांन पधारी, दूलह श्रीगोपाल॥"[21]

ईश्वर को साक्षात पति मान लेना और सांसारिक वैधव्य को पूरी तरह नकार देना मीरा के रहस्यवाद का सबसे क्रांतिकारी और भावात्मक पहलू है। उनका यह संबंध सामाजिक मर्यादाओं से परे एक अतींद्रिय धरातल पर घटित होता है, जहाँ लौकिक जगत की कोई भी भौतिक बाधा या राणा का कोप उनके इस अलौकिक सुहाग को खंडित नहीं कर सकता।

3.3. निर्गुण और सगुण का समन्वयात्मक रहस्यवाद

आधुनिक आलोचकों के अनुसार, मीराबाई मध्यकाल की उन विरल कवयित्रियों में हैं जिनके यहाँ सगुण और निर्गुण की सीमाएँ आपस में घुल-मिल जाती हैं।[22] मीरा के पदों को ध्यान से देखने पर पता चलता है कि वे जिसे 'गिरधर नागर' कहती हैं, वही उनका 'अविनाशी' और 'अलख' पुरुष भी है। वे कहती हैं:

"जोगी मत जा, मत जा, मत जा, पांई परूँ मैं तोरी।

प्रेम भगति को पैंड़ो ही न्यारो, हम कूँ गैल बता जा॥

चन्दन की चिता रचाऊँ, अपने हाथ जला जा।

जल बल भई भसम की ढेरी, अपने अंग लगा जा॥"[23]

यहाँ 'जोगी' शब्द साक्षात ईश्वर का प्रतीक बनकर आया है। चिता सजाना और भस्म को प्रियतम के अंग से लगाने की कामना सूफियों के 'फ़ना' (परमात्मा में स्वयं को पूरी तरह विलीन कर देना) के सिद्धांत और जोगियों के भस्म-रमण का

[21] त्रिपाठी, विश्वनाथ. *मीरा का काव्य*. वाणी प्रकाशन, 2015, पृष्ठ संख्या 62

[22] सिंह, डॉ. नामवर. *भक्ति काव्य और सामाजिक विमर्श*. पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 2021, पृष्ठ संख्या 104

[23] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 20

एक अनूठा सम्मिश्रण है। यहाँ सगुण की मूर्ति धीरे-धीरे एक विराट रहस्यमयी निर्गुण सत्ता का रूप ले लेती है, जहाँ रूप विलीन हो जाता है और केवल भाव शेष रहता है।

4. मीरा के रहस्यवाद पर विभिन्न मध्यकालीन संप्रदायों का प्रभाव

मीराबाई किसी संप्रदाय विशेष के कठोर नियमों से बंधी हुई नहीं थीं। उनके काल में राजस्थान, गुजरात और उत्तर भारत में कई धार्मिक धाराएँ समानांतर रूप से प्रवाहित थीं, जिनमें परस्पर वैचारिक आदान-प्रदान हो रहा था। आधुनिक अकादमिक शोधों में मीरा के इस बहुआयामी सांस्कृतिक प्रभाव को विशेष रूप से रेखांकित किया गया है।[24]

4.1. नाथ और संत मत का प्रभाव (साधनात्मक संकेत)

मीरा के अनेक पदों में हठयोग की पारिभाषिक शब्दावली जैसे—त्रिकुटी, सुरति-निरति, अनहद नाद, और अमृत-स्राव का प्रचुर प्रयोग मिलता है। यह इस बात का अकादमिक प्रमाण है कि वे निर्गुण संतों की साधना पद्धति से भली-भांति परिचित थीं:

"त्रिकुटी महल बना है न्यारा, जहाँ झलके ब्रह्म उजियारा।

अनहद बाजत ढोल नगारा, सुरत निरत मन भया कंवारा।।"[25]

यह पद पूरी तरह से साधनात्मक रहस्यवाद का उदाहरण है। यहाँ मीरा आंतरिक चक्रों के भेदन के बाद होने वाले 'ब्रह्म उजियारे' की बात कर रही हैं, जो उनके सगुण रूप के भीतर छिपे दार्शनिक आधार को पुष्ट करता है। उनका मन 'कंवारा' हो गया है, अर्थात वह संसार के समस्त दोषों से मुक्त होकर पूर्णतः शुद्ध हो चुका है।

[24] शर्मा, रामकिशोर और शर्मा, सुजीत कुमार. *मीराँबाई की सम्पूर्ण पदावली: एक ऐतिहासिक मूल्यांकन*. भारतीय विद्या मंदिर, 2023, पृष्ठ संख्या 142-148

[25] सिंहल, ब्रजेंद्र कुमार. *मीरांबाई प्रामाणिक जीवनी एवं मूल पदावली*. भारतीय विद्या मंदिर, 2012, पृष्ठ संख्या 310.

4.2. सूफी मत की प्रेम-पीर

सूफी मत में विरह की पीर को साधना का प्राण माना गया है। मीरा के विरह वर्णन में जो तड़प, दीवानगी और 'आंसुओं के जल से प्रेम की बेल सींचने' की व्याकुलता है, वह सूफी कवियों के अत्यंत समानांतर चलती है। जब मीरा कहती हैं:

"हेरी मैं तो दरद दिवाणी होय, दरद न जाण्यां म्हांरो कोय।

जोई जाणे वैदराज, की जिण लाई होय।।"[26]

तब वे उसी अतींद्रिय प्रेम-पीर को अभिव्यक्त कर रही होती हैं जो रहस्यवाद का केंद्रीय तत्व है। यह दर्द लौकिक दवाओं से ठीक होने वाला नहीं है, इसका इलाज केवल वही वैद्य कर सकता है जिसने यह दर्द दिया है।

5. रहस्यानुभूति का चरम उत्कर्ष: मिलन और आनंद की अवस्था

रहस्यवाद की परिणति केवल रोने या विरह की तड़प में नहीं होती, उसका अंतिम और सर्वोच्च लक्ष्य है—परमात्मा से महामिलन और अद्वैत उल्लास की प्राप्ति। मीराबाई जब विरह की अग्नि से तपकर कंचन बन जाती हैं, तब उन्हें अपने भीतर और बाहर सर्वत्र उसी प्रियतम का रूप दिखाई देने लगता है। यह रहस्यवाद की 'कैवल्य' या 'सहज समाधि' जैसी अवस्था है:

"मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई।

जाके सिर मोर मुकुट, मेरो पति सोई।।"[27]

और जब यह मिलन आंतरिक धरातल पर घटित हो जाता है, तो मीरा लोक-लाज और संसार के समस्त भयों से सर्वथा मुक्त होकर आनंद के सागर में डूब जाती हैं। तब उन्हें समाज की आलोचना की कोई चिंता नहीं रहती:

[26] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 9

[27] शुक्ल, रामचंद्र. *हिन्दी साहित्य का इतिहास*. नागरी प्रचारिणी सभा, 1929, पृष्ठ संख्या 136

"पग घुँघरू बाँध मीरा नाची रे।

लोग कहै मीरा भई बावरी, न्यात कहै कुलनासी रे॥

विष का प्याला राणा जी भेज्या, पीवत मीरा हाँसी रे।

मीरा के प्रभु गिरधर नागर, सहज मिले अविनासी रे॥"[28]

इस पद में प्रयुक्त **"सहज मिले अविनासी रे"** वाक्यांश अत्यंत महत्वपूर्ण है। 'सहज' शब्द बौद्ध सिद्धों, नाथों और संतों का एक अत्यंत दार्शनिक शब्द है, जिसका अर्थ है—बिना किसी बाह्य पाखंड या आडंबर के, अंतःकरण की अत्यंत स्वाभाविक अवस्था में ब्रह्म की प्राप्ति। मीरा का यह 'अविनाशी' पुरुष सगुण और निर्गुण के द्वंद्व से बहुत ऊपर उठ चुका है।

6. मीरा की रहस्यभावना की सामाजिक एवं प्रगतिशील प्रासंगिकता

मीराबाई का रहस्यवाद केवल एक वैयक्तिक आध्यात्मिक विलासिता या संसार से पलायन का मार्ग नहीं था। मध्यकाल के सामंती, पुरुष-सत्तात्मक समाज में एक राजघराने की स्त्री द्वारा पर्दे की प्रथा को तोड़कर, साधु-संगति में बैठकर ईश्वर को अपना पति घोषित करना एक अभूतपूर्व सामाजिक और सांस्कृतिक विद्रोह था।[29]

मीरा की रहस्यभावना के आयाम	**सामाजिक एवं आध्यात्मिक प्रभाव**	**प्रतिफल**
राजसी वैभव का पूर्ण त्याग	सामंती अहंकार और सत्ता पर प्रहार	वर्ग-विहीन चेतना का उदय

[28] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 32

[29] कांत, मीरां. *मीरां - मुक्ति की साधिका*. किताबघर प्रकाशन, 2019, पृष्ठ संख्या 75-80

मीरा की रहस्यभावना के आयाम	सामाजिक एवं आध्यात्मिक प्रभाव	प्रतिफल
साधु-संगति (दलित संत रैदास को गुरु बनाना)	जाति प्रथा और छुआछूत का कड़ा विरोध	सामाजिक समरसता की स्थापना
ईश्वर को एकमात्र पुरुष मानना	पुरुष-सत्तात्मक वर्चस्व को सीधी चुनौती	स्त्री-मुक्ति और स्वतंत्र अस्मिता

आधुनिक स्त्री-विमर्श के दृष्टिकोण से देखें तो मीरा का रहस्यवाद उन्हें एक "स्वतंत्र और संप्रभु स्त्री" के रूप में स्थापित करता है।[30] वे किसी लौकिक राजा के अधीन रहने से साफ इनकार करती हैं क्योंकि उनकी आत्मा ने उस अलौकिक 'अविनाशी' का वरण कर लिया है। यह आध्यात्मिक रहस्यवाद ही उनकी सामाजिक मुक्ति का सबसे बड़ा अस्त्र बनता है।

7. मीरा की भाषा और शैली में रहस्यवाद की अभिव्यक्ति

किसी भी कवि की रहस्यभावना तब तक प्रामाणिक नहीं हो सकती जब तक उसकी भाषा उस अलौकिक भाव को व्यक्त करने में सक्षम न हो। मीरा की भाषा राजस्थानी मिश्रित ब्रजभाषा है, जिसमें कहीं-कहीं गुजराती, खड़ीबोली और पंजाबी के शब्दों का भी सुंदर सम्मिश्रण मिलता है। उनकी शैली पूरी तरह से 'गीतिकाव्य' की शैली है, जिसमें गेयता, तरलता और संगीतात्मकता का अनूठा संगम है।

[30] पलसानिया, कालूराम. *मीराबाई और भक्ति की जीवंत परंपराएँ*. रूपा एंड कंपनी, 2022, पृष्ठ संख्या 118-125

जब मीरा रहस्यवादी भावों को व्यक्त करती हैं, तो उनकी भाषा प्रतीकात्मक हो जाती है। 'चुनरी', 'मेहंदी', 'हाथी', 'राणा', 'विष का प्याला' आदि शब्द उनके काव्य में केवल भौतिक वस्तुएँ नहीं हैं, बल्कि वे गहरे आध्यात्मिक और सामाजिक प्रतीकों के रूप में उभरते हैं। 'विष का प्याला' सांसारिक कष्टों और प्रताड़नाओं का प्रतीक बन जाता है, जिसे उनकी रहस्यानुभूति 'अमृत' में बदल देती है। उनकी भाषा में जो सादगी और सीधे दिल को छू लेने की क्षमता है, वही उनके रहस्यवाद को कबीर के रहस्यवाद की तुलना में अधिक सहज और लोक-प्रिय बनाती है।

8. निष्कर्ष

उपर्युक्त विशद विवेचन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मीराबाई के साहित्य में रहस्यभावना का स्वरूप अत्यंत व्यापक, गहन और मानवीय है। वे किसी बने-बनाए दार्शनिक ढर्रे या संप्रदाय की संकीर्ण सीमाओं में बंधकर नहीं चलीं। उनके काव्य में जहाँ एक ओर सगुण कृष्ण की रूप-माधुरी के प्रति अगाध अनुराग है, वहीं दूसरी ओर निर्गुण संतों की तरह उस असीम, अज्ञात और अविनाशी तत्व से एकाकार होने की व्याकुलता भी है।

मीरा का रहस्यवाद शुष्क तार्किकता या क्लिष्ट हठयोग का मार्ग नहीं है, बल्कि वह हृदय की सहज, सरस और रागात्मक अनुभूतियों का अनंत सागर है। उनका विरह सूफियों की प्रेम-पीर से समृद्ध है और उनका मिलन-उल्लास संतों के सहज-समाधि के आनंद से सराबोर है। वस्तुतः मीराबाई का काव्य और उनकी रहस्यभावना मध्यकालीन रूढ़ियों के विरुद्ध आत्मिक स्वतंत्रता का एक मधुर किंतु अत्यंत शक्तिशाली शंखनाद है, जो आज के समय में भी उतना ही प्रासंगिक, जीवंत और प्रेरणादायी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

[1] शुक्ल, रामचंद्र. *हिन्दी साहित्य का इतिहास*. नागरी प्रचारिणी सभा, 1929, पृष्ठ संख्या 112-115.

[2] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 45.

[3] शुक्ल, रामचंद्र. *हिन्दी साहित्य का इतिहास*. नागरी प्रचारिणी सभा, 1929, पृष्ठ संख्या 134.

[4] अंडरहिल, एवलिन. *रहस्यवाद: मानव की आध्यात्मिक चेतना के स्वरूप और विकास का एक अध्ययन*. डोवर पब्लिकेशन्स, 1911, पृष्ठ संख्या 72.

[5] सिंह, डॉ. नामवर. *दूसरी परंपरा की खोज*. राजकमल प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या 89.

[6] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 14.

[7] त्रिपाठी, विश्वनाथ. *मीरा का काव्य*. वाणी प्रकाशन, 2015, पृष्ठ संख्या 62.

[8] सिंह, डॉ. नामवर. *भक्ति काव्य और सामाजिक विमर्श*. पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 2021, पृष्ठ संख्या 104.

[9] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 20.

[10] शर्मा, रामकिशोर और शर्मा, सुजीत कुमार. *मीराँबाई की सम्पूर्ण पदावली: एक ऐतिहासिक मूल्यांकन*. भारतीय विद्या मंदिर, 2023, पृष्ठ संख्या 142-148.

[11] सिंहल, ब्रजेंद्र कुमार. *मीरांबाई प्रामाणिक जीवनी एवं मूल पदावली*. भारतीय विद्या मंदिर, 2012, पृष्ठ संख्या 310.

[12] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 9.

[13] शुक्ल, रामचंद्र. *हिन्दी साहित्य का इतिहास*. नागरी प्रचारिणी सभा, 1929, पृष्ठ संख्या 136.

[14] चतुर्वेदी, आचार्य परशुराम. *मीराबाई की पदावली*. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1976, पृष्ठ संख्या 32.

[15] कांत, मीरां. *मीरां - मुक्ति की साधिका*. किताबघर प्रकाशन, 2019, पृष्ठ संख्या 75-80.

[16] पलसानिया, कालूराम. *मीराबाई और भक्ति की जीवंत परंपराएँ*. रूपा एंड कंपनी, 2022, पृष्ठ संख्या 118-125.